उमापति चौधरी

बनाम

बिहार राज्य

14 मई, 1999

[श्रीमती सुजाता वी. मनोहर, डी.पी. मोहापात्रा और

आर.सी. लाहोटी, न्यायमूर्तिगण]

सेवा विधि-प्रतिनियुक्ति-अवधारणा-यह सर्वसम्मत होती है-इसमें अपने कर्मचारी की सेवाएँ देने के लिए नियोक्ता का स्वैच्छिक निर्णय और प्रतिनियुक्ति लेने वाले नियोक्ता द्वारा ऐसी सेवाओं की तदनुरूपी स्वीकृति शामिल है - प्रतिनियुक्ति पर जाने के लिए कर्मचारी की सहमति भी आवश्यक है - मूल विभाग, प्रतिनियुक्ति लेने वाले प्राधिकरण और प्रतिनियुक्ति प्राप्तकर्ता, सभी ने प्रतिनियुक्ति और उसके स्थायी समावेशन के लिए अपनी सहमति दी थी - ऐसी कोई सामग्री नहीं है कि प्रतिनियुक्ति लोक हित में नहीं थी या पक्षपात या ***दुर्भावना*** *से दूषित थी - 1981 से, प्रतिनियुक्ति प्राप्तकर्ता पद धारण कर रहा था - वह 1996 में सेवानिवृत्त हुआ - अभिनिर्धारित, प्रतिनियुक्ति प्राप्तकर्ता को उसकी सेवानिवृत्ति की तिथि पर प्रतिनियुक्ति लेने वाले विभाग का स्थायी कर्मचारी माना जाएगा।*

अपीलकर्ता, बिहार विश्वविद्यालय के स्नातकोत्तर विभाग में एक व्याख्याता, को बिहार संस्कृत शिक्षा बोर्ड अधिनियम, 1981 के तहत गठित बिहार संस्कृत शिक्षा बोर्ड के परीक्षा नियंत्रक के रूप में प्रतिनियुक्त किया गया था। विश्वविद्यालय, जो मूल विभाग था, बोर्ड, जो प्रतिनियुक्ति लेने वाला प्राधिकरण था, और अपीलकर्ता, जो प्रतिनियुक्ति प्राप्तकर्ता था, इन सभी ने अपीलकर्ता की प्रतिनियुक्ति और प्रतिनियुक्ति लेने वाले प्राधिकरण के संस्थान में उसके स्थायी समावेशन के लिए अपनी सहमति दी थी। बिहार सरकार के शिक्षा विभाग ने एक अधिसूचना द्वारा अपीलकर्ता को परीक्षा नियंत्रक के सभी कर्तव्यों और जिम्मेदारियों का निर्वहन करने के लिए प्राधिकृत किया। अपीलकर्ता द्वारा प्रदर्शित दक्षता और कड़ी मेहनत की

सराहना करते हुए, बोर्ड ने उसकी पुष्टिकरण का निर्णय लिया और परीक्षा नियंत्रक के पद पर अपीलकर्ता के स्थायी समावेशन के लिए विश्वविद्यालय की सहमति सूचित कर दी गई। तत्पश्चात् अपीलकर्ता को बोर्ड के अधीन परीक्षा नियंत्रक के रूप में नियुक्त किया गया था।

विश्वविद्यालय के कुछ कर्मचारियों ने एक विनिर्दिष्ट आदेश याचिका में बोर्ड के परीक्षा नियंत्रक के रूप में अपीलकर्ता की प्रतिनियुक्ति को आक्षेपित किया। उच्च न्यायालय ने राज्य सरकार को उस पद पर मूल नियुक्ति करने का निर्देश दिया क्योंकि अपीलकर्ता को एक अस्थायी नियुक्ति दी गई थी। सरकार की स्वीकृति की प्रत्याशा में बोर्ड के अध्यक्ष के आदेश द्वारा अपीलकर्ता को उसकी सेवा तत्काल प्रभाव से समाप्त करने की सूचना दी गई। अपीलकर्ता की सेवा समाप्त करने का बोर्ड का निर्णय राज्य सरकार द्वारा अनुमोदित किया गया था। इन आदेशों को एक विनिर्दिष्ट आदेश याचिका द्वारा आक्षेपित किया गया था। इस न्यायालय ने एक अंतर्वर्ती आदेश द्वारा यह निर्देश दिया कि अपीलकर्ता को परीक्षा नियंत्रक के रूप में बहाल किया जाए। अपीलकर्ता ने उस पद पर कार्य करना जारी रखा और 1996 में उस पद से सेवानिवृत्त हो गया।

अपील को स्वीकार करते हुए, इस न्यायालय ने

अभिनिर्धारित:1.1. प्रतिनियुक्ति को एक विभाग या संवर्ग या यहाँ तक कि एक संगठन (जिसे सामान्यतः मूल विभाग या ऋणदाता प्राधिकरण कहा जाता है) के एक कर्मचारी (जिसे सामान्यतः प्रतिनियुक्ति प्राप्तकर्ता कहा जाता है) को दूसरे विभाग या संवर्ग या संगठन (जिसे सामान्यतः प्रतिनियुक्ति लेने वाला प्राधिकरण कहा जाता है) को सौंपे जाने के रूप में उचित रूप से वर्णित किया जा सकता है। प्रतिनियुक्ति पर भेजने की आवश्यकता लोक हित में लोक सेवा की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उत्पन्न होती है। प्रतिनियुक्ति की अवधारणा सर्वसम्मत है और इसमें अपने कर्मचारी की सेवाएँ देने के लिए नियोक्ता का स्वैच्छिक निर्णय और प्रतिनियुक्ति लेने वाले नियोक्ता द्वारा ऐसी सेवाओं की तदनुरूपी स्वीकृति शामिल है। इसमें प्रतिनियुक्ति पर जाने या न जाने के लिए कर्मचारी की सहमति भी शामिल होती है। प्रस्तुत

वाद में, तीनों शर्तें पूरी हुई थीं। विश्वविद्यालय, जो मूल विभाग था, बोर्ड, जो प्रतिनियुक्ति लेने वाला प्राधिकरण था, और अपीलकर्ता, जो प्रतिनियुक्ति प्राप्तकर्ता था, इन सभी ने अपीलकर्ता की प्रतिनियुक्ति और प्रतिनियुक्ति लेने वाले प्राधिकरण के संस्थान में उसके स्थायी समावेशन के लिए अपनी सहमति दी थी। यह दिखाने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि अपीलकर्ता की प्रतिनियुक्ति लोक हित में नहीं थी या यह पक्षपात या दुर्भावना से दूषित थी। 1981 से, अपीलकर्ता बोर्ड के परीक्षा नियंत्रक का पद धारण कर रहा था। प्रारंभ में और उसके बाद, नौकरी में उसकी दक्षता और ईमानदारी को ध्यान में रखते हुए, बोर्ड ने उस पद पर उसकी सेवा को नियमित करने के लिए विश्वविद्यालय से अनुमति मांगी और अपनी सिफारिश राज्य सरकार को भेजी। विश्वविद्यालय ने भी बोर्ड के परीक्षा नियंत्रक के पद पर अपीलकर्ता के स्थायी समावेशन के लिए अपनी सहमति (अनापत्ति) सूचित की थी। तत्पश्चात् उस पद पर नियुक्ति बोर्ड द्वारा की जानी थी और बोर्ड ने उक्त पद पर अपीलकर्ता की सेवा को नियमित करने का निर्णय लिया था। हालाँकि, बोर्ड ने राज्य सरकार से अनुमति मांगी जो प्रदान कर दी गई थी। [757- डी- ई, बी]

1.2. एकल न्यायाधीश (ए.न्या.) ने न तो प्रतिनियुक्ति आदेश को अभिखंडित किया था और न ही इसे समाप्त करने के लिए कोई निर्देश जारी किया था। इन परिस्थितियों में, खंड पीठ (खं.पी.) अपीलकर्ता को राहत देने से मना करके स्पष्ट रूप से त्रुटि में थी। इसके अलावा, अपीलकर्ता इस बीच सेवा से सेवानिवृत्त हो चुका है। उसे उसकी सेवानिवृत्ति की तिथि पर परीक्षा नियंत्रक के पद पर बोर्ड का स्थायी कर्मचारी माना जाएगा और उसके सेवानिवृत्ति लाभों की गणना उसी आधार पर की जाएगी। [757- जी- एच]

दीवानी अपील क्षेत्राधिकार: दीवानी अपील सं. 336/1993

पटना उच्च न्यायालय के दीवानी रिट क्षेत्राधिकार वाद सं. 6054/1991 के दिनांक 17.12.91 के निर्णय और आदेश से उद्भूत।

अपीलकर्ता के लिए पंकज कालरा और आर.पी. सिंह।

उत्तरदाता के लिए इरशाद अहमद और यू.एस. प्रसाद।

न्यायालय का निर्णय निम्नलिखित द्वारा सुनाया गया:

डी.पी. मोहापात्रा, न्यायमूर्ति ये दोनों वाद एक-दूसरे से अंतर-संबद्ध हैं। दोनों वाद एक ही व्यक्ति श्री उमापति चौधरी द्वारा दायर किए गए हैं। जहाँ दीवानी अपील सं. 336/1993, पटना उच्च न्यायालय के दीवानी रिट क्षेत्राधिकार वाद सं. 6054/1991 के दिनांक 17.12.1991 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध निर्देशित है, वहीं विनिर्दिष्ट आदेश याचिका (सी) सं. 667/1992 में याचिकाकर्ता ने विनिर्दिष्ट आदेश याचिका के क्रमशः अनुलग्नक 11, 12 और 13 के रूप में दायर दिनांक 17.3.1992, 20.3.1992 और 21.3.1992 के आदेशों को अभिखंडित करने की मांग की है, जो दीवानी रिट क्षेत्राधिकार वाद सं. 6054/1991 के दिनांक 17.12.1991 के निर्णय के आधार पर पारित हुए प्रतीत होते हैं।

वाद में उठाया गया विवाद इस प्रश्न से संबंधित है कि क्या अपीलकर्ता को बिहार संस्कृत शिक्षा बोर्ड (संक्षेप में 'बोर्ड') का स्थायी कर्मचारी माना जाना चाहिए या वह कामेश्वर सिंह दरभंगा संस्कृत विश्वविद्यालय (संक्षेप में 'विश्वविद्यालय') से बोर्ड में प्रतिनियुक्ति पर था। उच्च न्यायालय ने यह मानते हुए कि अपीलकर्ता बोर्ड का स्थायी कर्मचारी होने का दावा नहीं कर सकता है और उसके आधार पर बोर्ड के परीक्षा नियंत्रक के रूप में उसकी सेवा समाप्त कर दी गई है, उसने ये दोनों वाद दायर किए हैं।

विवाद की सराहना के लिए प्रासंगिक तथ्यात्मक सार इस प्रकार बताया जा सकता है:

बोर्ड का गठन बिहार संस्कृत शिक्षा बोर्ड अधिनियम, 1981 (अधिनियम सं. 31, 1982) के तहत किया गया था और इसे बिहार राज्य में मध्यमा स्तर तक की संस्कृत शिक्षा को निर्देशित करने, पर्यवेक्षण करने और नियंत्रित करने की शक्ति सौंपी गई थी। बोर्ड के अध्यक्ष ने अपने पत्र सं. 21/15, दिनांक 29.7.1981 द्वारा विश्वविद्यालय से बोर्ड द्वारा आयोजित परीक्षाओं के संचालन और नियंत्रण के लिए एक सक्षम और अनुभवी व्यक्ति को प्रतिनियुक्त करने का अनुरोध किया। विश्वविद्यालय के कुलसचिव ने अपने पत्र सं. 8105/89,

दिनांक 14.8.1981 (विशेष अवकाश याचिका का अनुलग्नक-2) द्वारा विश्वविद्यालय के निर्णय की सूचना दी, जिसमें अपीलकर्ता को, जो तब विश्वविद्यालय के स्नातकोत्तर विभाग में एक व्याख्याता था, को अगले आदेश तक बोर्ड के परीक्षा नियंत्रक के रूप में प्रतिनियुक्त करने की अनुमति दी गई थी। बिहार सरकार के शिक्षा विभाग ने दिनांक 17.9.1982 की अधिसूचना (अनुलग्नक-3) द्वारा अपीलकर्ता को बोर्ड के परीक्षा नियंत्रक के सभी कर्तव्यों और जिम्मेदारियों का निर्वहन करने के लिए प्राधिकृत किया और आदेश को प्रतिनियुक्ति के पहले दिन से प्रभावी बनाया। राज्य सरकार के दिनांक 16 जून, 1983 के बिहार के महालेखाकार को लिखे पत्र (अनुलग्नक-4) से प्रतीत होता है कि सहायक कुलसचिव (संस्कृत शिक्षा) का पद, जो बिहार संस्कृत शिक्षा परिषद में बनाया गया था, को बिहार संस्कृत शिक्षा बोर्ड में स्थानांतरित होने पर परीक्षा नियंत्रक के रूप में पुनः पदनामित किया गया था। तत्पश्चात् बोर्ड द्वारा परीक्षा नियंत्रक के पद पर अपीलकर्ता के पुष्टिकरण का प्रश्न उठाया गया और बोर्ड के अध्यक्ष ने दिनांक 15.9.1983 के पत्र (अनुलग्नक-5) द्वारा राज्य सरकार को उसके पुष्टिकरण की सिफारिश करते हुए लिखा। उक्त पत्र से प्रतीत होता है कि बोर्ड ने परीक्षा नियंत्रक के रूप में अपीलकर्ता द्वारा प्रदर्शित दक्षता और कड़ी मेहनत की सराहना करते हुए उसके पुष्टिकरण का निर्णय लिया। विश्वविद्यालय के कुलसचिव के बोर्ड के अध्यक्ष को संबोधित दिनांक 20.4.1985 के पत्र (अनुलग्नक-7) में बोर्ड के परीक्षा नियंत्रक के पद पर अपीलकर्ता के स्थायी समावेशन के लिए विश्वविद्यालय की सहमति सूचित की गई थी। तत्पश्चात्, बिहार सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा जारी दिनांक 10 नवंबर, 1986 की अधिसूचना (अनुलग्नक-8) द्वारा अपीलकर्ता को अधिसूचना जारी होने की तारीख से अगले आदेश तक 1000-1820 रुपये के वेतनमान पर बोर्ड के अधीन परीक्षा नियंत्रक के रूप में नियुक्त किया गया था।

विश्वविद्यालय के कुछ कर्मचारियों ने पटना उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका, दीवानी रिट क्षेत्राधिकार वाद सं. 2230/1982 में बोर्ड के परीक्षा नियंत्रक के रूप में

अपीलकर्ता की प्रतिनियुक्ति को आक्षेपित किया, जिसका निपटान न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने दिनांक 13.11.1987 के निर्णय द्वारा किया। उक्त निर्णय का संचालक भाग इस प्रकार है:

> "10. उत्तरदाता सं. 3 को एक अस्थायी नियुक्ति दी गई है न कि एक मूल नियुक्ति। परीक्षा नियंत्रक के पद के लिए सेवा शर्तें अभी तक प्रदान नहीं की गई हैं। उत्तरदाता-राज्य सरकार और बोर्ड अंततः यह तय करने के लिए बाध्य हैं कि उनके पास परीक्षा नियंत्रक होगा या नहीं और यदि वे एक रखने का निर्णय लेते हैं तो उन्हें एक मूल नियुक्ति करने की प्रक्रिया अपनानी होगी। चूंकि परीक्षा नियंत्रक का कार्यालय अभी तक किसी योग्य व्यक्ति द्वारा स्थायी रूप से नहीं भरा गया है, मेरे विचार से, न्याय के उद्देश्य राज्य सरकार को परीक्षा नियंत्रक के पद की नियुक्ति के तरीके और सेवा शर्तों का निर्णय लेने और उक्त पद पर मूल नियुक्ति करने के लिए तत्काल आगे बढ़ने का निर्देश देकर संतुष्ट होंगे। राज्य सरकार आज से छह महीने के भीतर आवश्यक औपचारिकताएं पूरी करेगी। यदि ऐसी औपचारिकताएं छह महीने के भीतर पूरी नहीं होती हैं और उत्तरदाता सं. 3 की अस्थायी नियुक्ति को और जारी रखा जाता है तो याचिकाकर्ताओं के लिए दिनांक 10.1.1987 की अधिसूचना द्वारा की गई नियुक्ति की वैधता और सच्चाई को आक्षेपित करना खुला रहेगा।
>
> "11. परिणामस्वरूप, ऊपर दिए गए निर्देशों के साथ, यह आवेदन खारिज किया जाता है। लागत के रूप में कोई आदेश नहीं होगा।"
>
> यह निर्णय दीवानी अपील सं. 336/1993 में आक्षेपित है।

उच्च न्यायालय के उपर्युक्त निर्णय के अनुसरण में, बोर्ड के सचिव ने दिनांक 17.3.1992 के आदेश (विनिर्दिष्ट आदेश याचिका का अनुलग्नक-II) द्वारा अपीलकर्ता को

अध्यक्ष का आदेश सूचित किया जिसमें सरकार की स्वीकृति की प्रत्याशा में उसकी सेवा तत्काल प्रभाव से समाप्त कर दी गई थी। संचार का प्रासंगिक भाग इस प्रकार है:

> "उपर्युक्त विषय पर माननीय उच्च न्यायालय द्वारा दीवानी रिट क्षेत्राधिकार वाद सं. 6054/91 में पारित दिनांक 17.12.1991 के निर्णय के अनुसरण में और अध्यक्ष, बिहार संस्कृत शिक्षा बोर्ड के आदेश के तहत, सरकार के अनुमोदन की प्रत्याशा में आपकी सेवाएँ तत्काल प्रभाव से समाप्त की जाती हैं।"

अपीलकर्ता की सेवा समाप्त करने का बोर्ड का निर्णय आयुक्त-सह-सचिव, मानव संसाधन विकास विभाग, बिहार द्वारा जारी दिनांक 21.3.1992 की अधिसूचना (अनुलग्नक 14 और 15) द्वारा राज्य सरकार द्वारा अनुमोदित किया गया था। ये आदेश विनिर्दिष्ट आदेश याचिका में आक्षेपित हैं। इसमें, इस न्यायालय ने दिनांक 27.1.1993 को अंतर्वर्ती आवेदन सं. 1/1992 में पारित आदेश द्वारा सूचना जारी करते हुए आदेश दिया कि इस बीच दिनांक 17.3.1992 के आक्षेपित आदेशों (अनुलग्नक-11) और दिनांक 21.3.1992 (अनुलग्नक-14) का प्रवर्तन स्थगित रहेगा। इस न्यायालय ने आगे निर्देश दिया कि याचिकाकर्ता को परीक्षा नियंत्रक के रूप में बहाल किया जाए और उसे आदेश की तारीख से दो महीने के भीतर बोर्ड द्वारा उसका वेतन बकाया का भुगतान किया जाए। याचिकाकर्ता/अपीलकर्ता के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि उक्त आदेश के अनुसरण में याचिकाकर्ता/अपीलकर्ता ने बोर्ड के परीक्षा नियंत्रक के पद पर कार्य करना जारी रखा और लगभग 1996 में उक्त पद से सेवानिवृत्त हो गया।

पिछली कंडिकाओं में चर्चा किए गए दस्तावेजों की अंतर्वस्तु से जो स्थिति उभरती है, वह यह है कि 1981 से अपीलकर्ता बोर्ड के परीक्षा नियंत्रक का पद धारण कर रहा था। प्रारंभ में, उसे विश्वविद्यालय से प्रतिनियुक्ति पर लाया गया था और उसके बाद नौकरी में उसकी दक्षता और ईमानदारी को ध्यान में रखते हुए, बोर्ड ने उस पद पर उसकी सेवा को नियमित करने के लिए विश्वविद्यालय से अनुमति मांगी और अपनी सिफारिश राज्य सरकार को भेजी।

विश्वविद्यालय ने भी बोर्ड के परीक्षा नियंत्रक के पद पर अपीलकर्ता के स्थायी समावेशन के लिए अपनी सहमति (अनापत्ति) सूचित की थी। तत्पश्चात् उस पद पर नियुक्ति बोर्ड द्वारा की जानी थी और बोर्ड ने उक्त पद पर अपीलकर्ता की सेवा को नियमित करने का निर्णय लिया था। हालाँकि, बोर्ड ने राज्य सरकार से अनुमति मांगी जो भी प्रदान कर दी गई थी।

प्रतिनियुक्ति को एक कर्मचारी (जिसे सामान्यतः प्रतिनियुक्ति प्राप्तकर्ता कहा जाता है) को एक विभाग या संवर्ग या यहाँ तक कि एक संगठन (जिसे सामान्यतः मूल विभाग या ऋणदाता प्राधिकरण कहा जाता है) से दूसरे विभाग या संवर्ग या संगठन (जिसे सामान्यतः प्रतिनियुक्ति लेने वाला प्राधिकरण कहा जाता है) को सौंपे जाने के रूप में उचित रूप से वर्णित किया जा सकता है। प्रतिनियुक्ति पर भेजने की आवश्यकता लोक हित में लोक सेवा की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उत्पन्न होती है। प्रतिनियुक्ति की अवधारणा सर्वसम्मत है और इसमें अपने कर्मचारी की सेवाएँ देने के लिए नियोक्ता का स्वैच्छिक निर्णय और प्रतिनियुक्ति लेने वाले नियोक्ता द्वारा ऐसी सेवाओं की तदनुरूपी स्वीकृति शामिल है। इसमें प्रतिनियुक्ति पर जाने या न जाने के लिए कर्मचारी की सहमति भी शामिल होती है। प्रस्तुत वाद में, तीनों शर्तें पूरी हुई थीं। विश्वविद्यालय, जो मूल विभाग या ऋणदाता प्राधिकरण था, बोर्ड, जो प्रतिनियुक्ति लेने वाला प्राधिकरण था, और अपीलकर्ता, जो प्रतिनियुक्ति प्राप्तकर्ता था, इन सभी ने अपीलकर्ता की प्रतिनियुक्ति और प्रतिनियुक्ति लेने वाले प्राधिकरण के संस्थान में उसके स्थायी समावेशन के लिए अपनी सहमति दी थी। यह दिखाने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि अपीलकर्ता की प्रतिनियुक्ति लोक हित में नहीं थी या यह पक्षपात या दुर्भावना से दूषित थी। पिछले विनिर्दिष्ट आदेश याचिका में विद्वान एकल न्यायाधीश ने न तो प्रतिनियुक्ति आदेश को अभिखंडित किया था और न ही इसे समाप्त करने के लिए कोई निर्देश जारी किया था। वास्तव में विद्वान एकल न्यायाधीश ने विनिर्दिष्ट आदेश याचिका को खारिज कर दिया था। हमारे समक्ष यह दिखाने के लिए कोई सामग्री नहीं रखी गई है कि नवंबर 1987 के बीच, जब एकल न्यायाधीश का निर्णय सुनाया गया था, और दिसंबर 1991 के बीच, जब खंड

पीठ ने अपीलकर्ता द्वारा दायर विनिर्दिष्ट आदेश याचिका का निपटान किया था, पिछले वाद के याचिकाकर्ताओं ने एकल न्यायाधीश के निर्णय में दिए गए निर्देशों के गैर-अनुपालन के संबंध में कोई शिकायत की थी या कोई परिवाद किया था। इन परिस्थितियों में, खंड पीठ अपीलकर्ता को राहत देने से मना करके स्पष्ट रूप से त्रुटि में थी। इसके अलावा, अपीलकर्ता इस बीच सेवा से सेवानिवृत्त हो चुका है, और इसलिए, वाद में निर्णय केवल उसके सेवानिवृत्ति लाभों की गणना के उद्देश्य के लिए प्रासंगिक है।

पूरे वाद पर विचार करने पर हम इस मत के हैं कि उच्च न्यायालय अपीलकर्ता द्वारा दायर विनिर्दिष्ट आदेश याचिका को खारिज करने में त्रुटि में था।

तदनुसार अपील स्वीकार की जाती है। दीवानी रिट क्षेत्राधिकार वाद सं. 6054/1991 में दिनांक 17.12.1991 के आक्षेपित निर्णय को अभिखंडित किया जाता है। परिणामस्वरूप, विनिर्दिष्ट आदेश याचिका सं. 667/1992 स्वीकार की जाती है और दिनांक 17.3.1992, 20.3.1992 और 21.3.1992 के आदेश, जो दीवानी रिट क्षेत्राधिकार वाद सं. 6054, 1991 के निर्णय पर आधारित हैं, अभिखंडित किए जाते हैं। अपीलकर्ता को परीक्षा नियंत्रक के पद से उसकी सेवानिवृत्ति की तिथि पर बोर्ड का स्थायी कर्मचारी माना जाएगा और उसके सेवानिवृत्ति लाभों की गणना उसी आधार पर की जाएगी। हालांकि, लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं होगा।

आर.ए. अपील और याचिका स्वीकार कर ली गई।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।